८

नारी : धर्म एवं संस्कृति की सजग प्रहरी

महिलाएँ समाजरूपी गाड़ी के एक समर्थ पहिये के रूप में सर्वथा महत्त्वपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित हैं। महिलाओं पर समाज का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। उन पर जितना अपने जीवन का दायित्व है, उतना ही अपने परिवार, समाज और धर्म का भी उत्तरदायित्व है। आज तक के लाखों वर्षों अतीत के इतिहास पर यदि हम दृष्टिपात करते हैं, तो मालूम होता है कि उनके पैर सामाजिक या धार्मिक क्षेत्र में कभी पीछे नहीं रहे हैं, बल्कि आगे ही रहे हैं। जब हम तीर्थंकरों के जीवन को पढ़ते हैं, तो पता चलता है कि उन महापुरुषों के संघ में सम्मिलित होने के लिए, उनकी वाणी का अनुसरण करने के लिए और उनके पावन सिद्धान्तों को अपने जीवन में उतारने तथा जन-जन में प्रसारित करने के लिए, अधिक-से-अधिक संख्या में, शक्ति के रूप में, बहनें ही आगे आती हैं।

महावीरकालीन महिला-जीवन :

दूसरे तीर्थंकरों की बातें शायद आपके ध्यान में न हों, किन्तु अंतिम तीर्थंकर भगवान् महावीर का इतिहास तो आपको विदित होना ही चाहिए। महावीर प्रभु ने साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका के रूप में धर्म के चार तीर्थ स्थापित किए और उन्हें एक संघ का रूप दिया गया। शास्त्रों में चारों तीर्थों की संख्या का उल्लेख मिलता है और उस इतिहास को हम बराबर हजारों वर्षों से दुहराते आ रहे हैं। वह इतिहास हमें बतलाता है कि भगवान् महावीर के शासन में यदि चौदह हजार साधु थे, तो छत्तीस हजार साध्वियाँ भी थीं। साधुओं की अपेक्षा साध्वियों की संख्या में कितना अन्तर है! ढाई गुणी से भी ज्यादा है यह संख्या।

यह ठीक है कि पुरुषवर्ग में से भी काफी साधु आए, और यह भी सही है कि वे अपने पूर्व जीवन में बड़े ऐश्वर्यशाली और धनपति थे, तथा भोग-विलासों में उनका जीवन गुजर रहा था। किन्तु, भगवान् महावीर की वाणी जैसे ही उनके कानों में पड़ी, वे महलों को छोड़ कर नीचे उतर आए। और, बड़े-बड़े विद्वान् भी, जो तत्कालीन समाज का नेतृत्व कर रहे थे, भिक्षु के रूप में दीक्षित हुए तथा उन्होंने महान् होते हुए भी जनता के एक छोटे-से सेवक के रूप में अपने अन्तर्मन से भरपूर जन-सेवा की।

यह सब होते हुए भी जरा संख्या पर तो ध्यान दीजिए, कहाँ चौदह हजार और कहाँ छत्तीस हजार!

महिला-जीवन का आदर्शोपम अतीत :

कहना चाहिए कि भगवान् की वाणी का अमृत रस, सबसे ज्यादा उन बहनों ने ग्रहण किया, जो सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई थीं और जिन्हें हम अज्ञान और अंधकार में रहने को मजबूर करते चले आ रहे थे। वास्तव में वे शक्तियाँ रूढ़ियों के शिलाखण्डों से दबी हुई थीं, परन्तु ज्योंही उन्हें उभरने का अवसर मिला, भगवान् की पावन वाणी का प्रकाश मिला, त्यों ही वे एक बहुत बड़ी संख्या में साधना की काँटों भरी राह पर बढ़ आईं। जिनका जीवन महलों में गुजरा था, जिनके एक इशारे पर हजारों दास और दासियाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिन-रात नाचने को तैयार खड़ी रहती थीं, जिन्होंने अपने जीवन में कभी सर्दी या गर्मी बर्दाश्त नहीं की थी, जिनका जीवन फूलों की सेज पर बीता था, उन देवियों के मन में जब वैराग्य की लहर उठी, तो वे संसार की विपरीत परिस्थितियों एवं विपत्तियों से टक्करें लेती हुई, भयानक से भयानक सर्दी-गर्मी और वर्षा की यातनाएँ झेलती हुई भी भिक्षुणी बनकर विचरने लगीं। उनका शरीर फूल के समान सुकुमार था, जो कभी हवा के एक हलके उष्ण झोंके से भी मुरझा जाता था, किन्तु हम देखते हैं कि वे ही देवियाँ भीषण गर्मी और कड़कड़ाती हुई सर्दी के दिनों में भी भगवान् महावीर का मंगलमय सन्देश घर-घर में पहुँचाती थीं। जिनके हाथों ने देना-ही-देना जाना था, आज वे ही राजरानियाँ अपनी प्रजा के सामने, यहाँ तक कि झोंपड़ियों में भी भिक्षा के लिए घूमती थीं और भगवान् महावीर की वाणी का अमृत बाँटती फिरती थीं।

साधक-जीवन की समानता :

मैं समझता हूँ, कि अन्तरात्मा की जब दिव्यशक्तियाँ जाग उठती हैं, तो यह नहीं होता कि कौन पीछे है और कौन आगे जा चुका है। कभी आगे रहने वाले पीछे रह जाते हैं और कभी पीछे रहने वाले बहुत आगे बढ़ जाते हैं।

जब हम श्रावकों की संख्या पर ध्यान करते हैं, तो यही बात याद आ जाती है। श्रावकों का जीवन कठोर जीवन अवश्य रहा है, किन्तु उनकी संख्या १,५९,००० ही रही और उनकी तुलना में श्राविकाओं की संख्या तीन लाख से भी ऊपर पहुँच गई।

तेजोमय इतिहास :

कहने का अर्थ यह है कि हमारी श्राविका बहनों का इतिहास भी बड़ा ही तेजोमय रहा है। आज वह इतिहास धुंधला पड़ गया है और हम उसे भूल गए हैं। अतः बहनें आज फिर अँधेरी कोठरी में रह रही हैं, उन्हें ज्ञान का पर्याप्त प्रकाश नहीं मिल रहा है। किन्तु आज से ढाई हजार वर्ष पहले के युग को देखने पर विदित होता है कि चौदह हजार की तुलना में छत्तीस हजार और १,५९,००० की तुलना में ३,१८,००० श्राविकाओं के रूप में सामने आकर अपनी समुन्नत, सुरम्य एवं सर्वथा स्पृह्य झाँकी उपस्थित कर देती हैं।

महिलाओं का दुष्कर साहसी जीवन :

बहुत-सी बहनें ऐसी भी थीं, जिनके पति दूसरे धर्मों को मानने वाले थे। उन पुरुषों (पतियों) ने अपने जीवन-क्रम को नहीं बदला, किन्तु इन बहिनों ने इस बात की कतई परवाह न कर अपना स्वयं का जीवन-क्रम बदल डाला और सत्य की राह पर आगईं। ऐसा करने में उन्हें बड़े-बड़े कष्ट उठाने पड़े, भयानक यातनाएँ भुगतनी पड़ीं और धर्म के मार्ग पर आने का बहुत महँगा मूल्य चुकाना पड़ा। जब उन बहनों के घर वालों की मान्यताएँ भिन्न प्रकार की रहीं, उनके पति का धर्म दूसरा रहा, तब उन्होंने अनेक प्रकार का विरोध सह कर भी अपने सम्मान, अपनी प्रतिष्ठा को खतरे में डालकर भी तथा नाना प्रकार के कष्टों को सहन करते हुए भी वे प्रभु के पथ का अनुसरण करती रहीं।

तात्पर्य यह है कि जब हम नारी जाति के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं, तो देखते हैं कि उनका जीवन बहुत ऊँचा जीवन रहा है। जब हम उनकी याद करते हैं, तो हमारा मस्तक श्रद्धा से स्वतः झुक जाता है।

सम्राट् श्रेणिक और महाराणी चेलना :

मगध सम्राट् राजा श्रेणिक का इतिहास, भारतीय इतिहास के कण-कण में आज भी चमक रहा है। भगवान् महावीर के साथ-साथ श्रेणिक का नाम भी हमें बरबस याद आ जाता है। उसे अलग नहीं किया जा सकता। आप जानते हैं, वह महान् सम्राट् श्रेणिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् के चरणों में पहुँचा, इसका श्रेय किसे प्राप्त है? किसने भगवान् के चरणों तक पहुँचाया था उसे? सम्राट् श्रेणिक सहज ही नहीं पहुँच गया था, क्योंकि वह दूसरे मत का अनुयायी था। उसे भगवान् के चरणों में पहुँचाने वाली हमारी एक बहिन थी, जिसका नाम था चेलना। उसे इस पवित्र कार्य को करने में कड़े संघर्षों का सामना भी करना पड़ा, बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ भुगतनी पड़ीं। अपने पति को भगवान् के मंगल-मार्ग पर लाने के लिए उसने न जाने कितने खतरे अपने सर पर लिए, कितनी बड़ी जोखिमें उठाईं! हम रानी चेलना के महान् जीवन को कभी भुला नहीं सकते, जिसने अपनी सम्पूर्ण चेतना एवं शक्ति के साथ अपने सम्राट् पति को धर्म के मार्ग पर लाने का निरन्तर प्रयास किया और अन्त में वह अपने प्रयास में सफलता प्राप्त कर के ही रही।

त्याग की उज्ज्वल मूर्ति : नारी :

उस समय के इतिहास को देखने से यह स्पष्टतया ज्ञात हो जाता है कि बहनों के त्यागमय महान् कार्यों से ही समाज, और धर्म का जीवन-पथ आलोकित था। उनको संसार का बड़े-से-बड़ा वैभव मिला था, किन्तु वे उस वैभव की दलदल में फँसी नहीं रहीं, और उन्होंने अकेले ही धर्म का मार्ग अंगीकार नहीं किया, प्रत्युत घर में जो सास, ससुर, देवर, ननद, पति, पुत्र तथा अपने पिता, माता, भ्राता आदि कुटुम्बीजन थे, उन सबको साथ लेकर धर्म का मार्ग तय किया है। इस रूप में हमारी बहिनों का इतिहास बड़ा ही उज्ज्वल और गौरवमय रहा है।

चिन्तन के क्षेत्र में नारी :

प्राचीन ग्रन्थों को देखने के क्रम में मुझे एक बड़ा ही सुन्दर ग्रन्थ देखने को मिला। यह पन्द्रहवीं शती का एक साध्वी का लिखा हुआ ग्रन्थ है। उस ग्रन्थ के अक्षर बड़े ही सुन्दर, मोती-सरीखे हैं, साथ ही अत्यन्त शुद्ध भी। यह नारी की उच्च चिन्तना एवं मौलिक सर्जना का एक उज्ज्वल उदाहरण है।

पाँच सौ वर्षों के बाद, आज, सम्भव है, उसके परिवार में कोई भी आदमी न बचा हो, किन्तु उसने जिस सुन्दर वस्तु की सर्जना की है, वह आज भी एकबारगी मन को गुदगुदा देती है। उसे देख कर मैंने विचार किया—अगर वह साध्वी उस शास्त्र को ठीक तरह न समझती होती, तो इतना शुद्ध और सुन्दर कैसे लिख सकती थी? उसकी लिखावट की शुद्धता से पता चलता है कि उसमें ज्ञान की गम्भीरता और चिन्तन की चारुता सहज समाहित थी।

इसके अतिरिक्त मैंने और भी शास्त्र-भण्डार देखे हैं, जिनमें प्रायः देखा है, अनेक शास्त्रों का लेखन आदि या तो किसी की माता या बहन या बेटी या धर्म-पत्नी आदि के द्वारा कराया गया है। इस प्रकार बहुत से शास्त्र एवं ग्रन्थ हमारी बहनों के धार्मिक एवं साहित्यिक-चेतना के ही प्रतिफल हैं। मेरा विचार है, कि धर्म-साधना के अतिरिक्त साहित्यिक दृष्टिकोण की अपेक्षा से भी बहनों का जीवन बड़ा शानदार रहा है।

वर्तमान युग में नारियों का दायित्व :

आज समाज में, जो गड़बड़ियां फैली हुई हैं, उनका उत्तरदायित्व पुनः बहनों पर आया है। क्योंकि मानव-जीवन का महत्त्वपूर्ण भाग बहनों की ही गोद में तैयार होता है। उन्हें सन्तान के रूप में एक तरह से कच्ची मिट्टी का लोंदा मिला है। उसे क्या बनाना है और क्या नहीं बनाना है? यह निर्णय करना उनके ही अधिकार क्षेत्र में है। जब माताएँ योग्य होती हैं, तो वे अपनी सन्तान में त्याग, तप एवं करुणा का रस पैदा कर देती हैं और धर्म एवं समाज की सेवा के लिए उनके जीवन में महत्त्वपूर्ण प्रेरणा जगा देती हैं। ऐसी सन्नारियों के बीच मदालसा का नाम चमकता हुआ हमारी आँखों के सामने बरबस आ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता है। जब उसे पुत्र होता है, तब वह एक लोरी गाती है और उसमें आत्म-तत्त्व की शुद्ध-चेतना का पावन संदेश देती है--

"शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि,
संसार - माया - परिवर्जितोऽसि।"

यह एक लम्बी और विराट् लोरी है, जो दार्शनिक-क्षेत्र में बड़ी ही चित्ताकर्षक है। इसमें कहा गया है—तू शुद्ध है, तू निरंजन है, अतः तू विकारों में, संसार की माया में मत फंस जाना। तू बुद्ध है, ज्ञानी है, अतः अज्ञान में न भटक जाना। तू यदि अज्ञान और अविवेक में फंसा रहा, और तेरे मन का द्वार खुला न रहा, तो तू समाज में अंधकार फैला देगा। तू जगत् को प्रकाश देने आया है और तेरा ज्ञान तुझे ही नहीं जगत् को भी प्रकाश की ओर ले जाएगा।

मदालसा का यह उद्बोधन, भारत का शाश्वत उद्बोधन है और वह हीनता, दीनता एवं मलिनता के अन्धगर्त में पड़ी हुई हर आत्मा के उत्थान के लिए, अपने स्वरूप-बोध के लिए है—तू निरंजन है, परम चेतनामय है, तू क्षुद्र संसारी जीव नहीं है। तू इस संसार के मायाजाल में फंसने हेतु नहीं आया है। तुझे अपने और संसार के मैल को साफ करना है। तू संसार की गलियों में कीड़ोंवत् रेंगने के लिए नहीं है। तू तो ऊर्ध्व-चेतन का परम पुरुष है, परम ब्रह्म है।

हाँ तो, भारत के इतिहास-पृष्ठ पर जीवन-जागरण का यह मंगल-गीत आज भी अंकित है। और, मदालसा की उदात्त प्रेरणा हमारे सामने प्रकाशमान है।

अब भी यदि कोई यह कहे कि बहिनें सदा से मूर्ख रही हैं, और उन्होंने संसार को अन्धकार में ले जाने का ही प्रयत्न किया है, तो इसका उत्तर है कि वे महान् नारी ही हैं, जिन्होंने ऐसे-ऐसे पुत्र-रत्न दिये जो हर क्षेत्र में महान् बने। यदि कोई साधु बना, तो भी महान् बना और यदि राजगद्दी पर बैठा, तो भी महान् बना! कोई सेनापति के रूप में वीरता के पथ पर अग्रसर हुआ, तो देश की रक्षा करके जनता का मन जीतता चला गया और पृथ्वी पर जहाँ भी अपने पैर जमाये, वहीं एक मंगलमय साम्राज्य खड़ा कर दिया।

महत्ता की जननी : नारी :

प्रश्न है, ये सब चीजें कहाँ से आईं? माता की गोदी में से नहीं आईं, तो क्या आकाश से बरस पड़ीं? पुत्रों और पुत्रियों का निर्माण तो माता की गोद में ही होता है। यदि माता योग्य है, तो कोई कारण नहीं कि पुत्र योग्य न बने और माता अयोग्य है, तो कोई शक्ति नहीं, जो पुत्र को योग्य बना सके। वे संसार को जैसा चाहें, वैसा बना सकती हैं।

मेरी एक रचना के शिशु-गीत में एक बालक स्वयं कहता है कि—"मैं महान् हूँ! मैंने बड़े-बड़े काम किये हैं। राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध वगैरह सब मुझ में से बने हैं।" इस प्रकार बहुत कुछ कहने के बाद अन्त में कहता है—"आखिर मैं माता-पिता का खिलौना हूँ। वे जो बनाना चाहते हैं, वही मैं बन जाता हूँ। मैं देवता भी बन सकता हूँ और राक्षस भी बन सकता हूँ। मेरे अन्दर दोनों तरह की शक्तियाँ विद्यमान हैं। यदि माता-पिता देवता हैं, उनमें ठीक तरह सोचने की शक्ति है और मुझे देवता बनाना चाहते हैं, तो वे मुझे अवश्य ही देवता बना देंगे। यदि माता-पिता की गलतियों से, राक्षस बनने की शिक्षा मिलती रही और आसपास के वातावरण ने बुरे संस्कारों को जागृत कर दिया, तो मैं बड़े-से-बड़ा राक्षस भी बन सकता हूँ।"[1]

---

१. अन्त में माता-पिता के खेल का सामान हूँ मैं।
जो विचारें वह बना लें, देव हूँ, शैतान हूँ मैं॥—'अमर माधुरी'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाज-निर्माण में नारी का स्थान :

समाज का जो पूर्ण शरीर है, उसके एक ओर नारीवर्ग है और दूसरी ओर पुरुष-वर्ग। कहीं ऐसा तो नहीं है कि शरीर के एक हिस्से को लकवा मार जाए, वह बेकार हो जाए और शेष आधा शरीर ज्यों-का-त्यों सबल और कार्यकारी बना रहे। यह ठीक है कि एक हाथ और एक पैर के सुन्न हो जाने पर भी दूसरा हाथ और दूसरा पैर हरकत में रह सकता है, किन्तु काम करने को यथोचित सक्षम नहीं हो सकते। इसके विपरीत यदि शरीर के दोनों हिस्से ठीक अवस्था में रह कर गति करते हैं, तो वे अवश्य काम करेंगे और ऐसा ही जीवन समाज को कुछ दे सकेगा और कुछ ले भी सकेगा।

आज ऐसा लगता है, समाज के आधे अंग को लकवा मार गया है और वह बेकार हो गया है। उसके पास वह निर्मल विचार और चिन्तन नहीं रहा, जो अपनी सन्तान को महान् बना सके। आज जो अभद्र गालियाँ, लड़के-लड़कियों की जुबान पर आती हैं, बहनों की ओर से ही आती हैं। हजारों कुसंस्कार और मेरे-तेरे की दुर्भावना, प्रायः अबोध माताओं की ही देन है। निरन्तर द्वैतवाद की विषाक्त कड़वी घुट्टियाँ पिलाते रहने का अन्तिम यही दुष्परिणाम होता है।

इस प्रकार, बच्चों के मन में जहाँ अमृत भरा जाना चाहिए, वहाँ जहर भरा जाता है और आगे चलकर माता-पिता को जब उसका परिणाम भोगना पड़ता है, तब वे रोते-चिल्लाते हैं! आज बच्चों का जो ऐसा भ्रष्ट जीवन बन रहा है, इसका एकमात्र कारण यही है कि हमारी बहनों की मानसिकता ऊँची नहीं रही।

पक्षी को आकाश में उड़ने के लिए दोनों पंखों से मजबूत होना आवश्यक है। जब दोनों पंख सशक्त होंगे, तभी वह उड़ सकेगा, एक पंख से नहीं। यही बात समाज के लिए भी है। समाज का उत्थान पुरुष-स्त्री दोनों के समान शक्ति-सम्पन्न होने पर निर्भर है। आज हमारा समाज जो इतना गिरा हुआ है, उसका मूल कारण यही है कि उसका एक पंख इतना दुर्बल और नष्ट-भ्रष्ट हो गया है कि उसमें कर्तृत्वशक्ति नहीं रही, जीवन नहीं रहा। एक पंख के निर्जीव हो जाने पर दूसरा पंख भी काम नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में पतन के सिवा उत्थान की सम्भावना ही क्या है?

आज सर्वत्र विषम हवाएँ चल रही हैं। जब-तब यह सुनने को मिलता है कि आज घर-घर में कलह की आग सुलग रही है। प्रश्न उठता है—यह कलह जागता कहाँ से है? मालूम करेंगे, तो पता चलेगा कि ९० प्रतिशत झगड़े इन्हीं बहनों के कारण होते हैं। उसके मूल में किसी-न-किसी बहन की नासमझी ही होती है। झगड़े और मन-मुटावों का पता करने चलेंगे, तो पाएँगे कि उनमें से अधिकांश का उत्तरदायित्व बहनों पर ही है। इसका कारण बहनों का अज्ञान है। उनकी अज्ञानता ने ही उन्हें ऐसी स्थिति में ला दिया है। यदि वे ज्ञान का प्रकाश पा जाएँ और अपने हृदय को विशाल एवं विराट् रखें, अपने जीवन को महान् बनाएँ और मात्र लेने की बुद्धि न रखकर समय पर कुछ देने की बुद्धि भी रखें, यदि उनके मन इतने महान् बन जाएँ कि अपने-पराये सभी के सुख-दुःख में समान भाव से सस्नेह सहयोग दे सकें, सेवा कर सकें, तो परिवारों के झगड़े, जो विराट् रूप ले लेते हैं, न ले सकें और न किसी प्रकार के संघर्ष का अवसर ही आ सके।

नारी की आदर्श दानशीलता :

यहाँ इतिहास की एक घटना याद आ जाती है, एक महान् नारी की महान् उदारता की। उसका नाम आज भले ही किसी को याद न हो, किन्तु उसकी दिव्य जीवन-ज्योति हमारे सामने प्रकाशमान है।

भारत में बड़े-बड़े दार्शनिक कवियों ने जन्म लिया है। संस्कृत भाषा के ज्ञाता यह जानते हैं कि संस्कृत साहित्य में माघ कवि का स्थान कितना महत्त्वपूर्ण है? माघ कवि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारत के गिने-चुने कवियों में से एक माने जाते हैं और उनकी कविता की भाँति उनकी जीवन-गाथा भी समान रूप से मूल्यवान है।

कविता की बदौलत लाखों का धन आता, किन्तु माघ का यह हाल कि इधर आया और उधर दे दिया। अपनी उदारवृत्ति के कारण वह जीवन भर गरीब ही बने रहे। कभी-कभी तो ऐसी स्थिति भी आ जाती कि आज तो खाने को है, किन्तु कल क्या होगा, कुछ पता नहीं। कभी-कभी तो उसे भूखा ही रहना पड़ता। किन्तु, उस माई के लाल ने जो कुछ भी प्राप्त किया, उसे देने से कभी भी इन्कार नहीं किया। लोकोक्ति है—'माघ का महत्त्व पाने में नहीं, देने में है।'

एक बार वह एकान्त में अपनी बैठक में बैठे थे और अपनी एक रचना को परिमार्जित कर रहे थे। इसी बीच जेठ की उस कड़कड़ाती हुई गर्मी में, दोपहर के समय, एक गरीब ब्राह्मण उनके पास आया। ज्योंही वह ब्राह्मण आया और नमस्कार करके सामने खड़ा हुआ कि इनकी दृष्टि उसकी दीनता को भेद गई। उसके चेहरे पर गरीबी की छाया पड़ रही थी और थकावट तथा परेशानी स्पष्ट झलक रही थी।

कवि ने ब्राह्मण से पूछा—क्यों भैया! इस धूप में आने का कैसे कष्ट किया?

ब्राह्मण—जी, और तो कोई बात नहीं है, एक आशा लेकर आपके पास आया हूँ। मेरे यहाँ एक कन्या है। वह जवान हो गई है। उसके विवाह की व्यवस्था करनी है, किन्तु साधन कुछ भी नहीं है। अर्थाभाव के कारण मैं बहुत उद्विग्न हूँ। आपका नाम सुनकर बड़ी दूर से चला आ रहा हूँ। आपकी कृपा से मुझ गरीब की कन्या का भाग्य बन जाए, यही याचना है।

माघ कवि ब्राह्मण की दीनता को देखकर विचार में डूब गए। उनका विचार में पड़ जाना स्वाभाविक ही था, क्योंकि उस समय उनके पास एक शाम खाने को भी कुछ नहीं बचा था। परन्तु एक गरीब ब्राह्मण आशा लेकर आया है। अतः कवि की उदार भावना दबी न रह सकी। उसने ब्राह्मण को बिठलाया और आश्वासन देते हुए कहा—"अच्छा भैया, बैठो, मैं अभी आता हूँ।"

माघ घर में गए। इधर-उधर देखा, तो कुछ न मिला। अब उनके पश्चात्ताप का कोई पार न रहा। सोचने लगे—"माघ! आज क्या तू घर आए याचक को खाली हाथ लौटा देगा? नहीं, आज तक तूने ऐसा नहीं किया है। तेरी अन्तरात्मा यह सहन नहीं कर सकती। किन्तु, किया क्या जा सकता है? कुछ हो देने को तब तो न?"

माघ विचार में डूबे इधर-उधर देख रहे थे। कुछ उपाय नहीं सूझ रहा था। आखिर एक किनारे सोई हुई पत्नी की ओर उनकी दृष्टि गई। पत्नी के हाथों में सोने के कंगन चमक रहे थे। सम्पत्ति के नाम पर वे ही कंगन उसकी सम्पत्ति थे।

माघ ने सोचा—"कौन जाने, माँगने पर यह दे, या न दे! इसके पास और कोई धन-सम्पत्ति तो है नहीं, कोई अन्य आभूषण भी नहीं। यही कंगन है, तो शायद देने से इन्कार कर दे! संयोग की बात है कि यह सोयी हुई है। अच्छा अवसर है। क्यों न चुपचाप एक कंगन निकाल लिया जाए!"

माघ, पत्नी के हाथ का एक कंगन निकालने लगे। कंगन सरलता से खुला नहीं और जोर लगाया तो थोड़ा झटका लग गया। पत्नी की निद्रा भंग हो गई। वह चौंक कर जगी और अपने पति को देखकर बोली—आप क्या कर रहे थे?

माघ—कुछ नहीं, एक सामान टटोल रहा था।

पत्नी—नहीं, सच कहिए। मेरे हाथ में झटका किसने लगाया?

माघ—झटका तो मुझी से लगा था।

पत्नी—तो आखिर बात क्या है? क्या आप कंगन खोलना चाहते थे?

माघ—हाँ, तुम्हारा सोचना सही है।

पत्नी—लेकिन, किसलिए?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माघ—एक गरीब ब्राह्मण दरवाजे पर बैठा है। वह एक बड़ी आशा लेकर यहाँ आया है। वह बेचारा बहुत गरीब है। एक जवान लड़की है, जिसकी शादी उसे करनी है, किन्तु करे तो कैसे? पास कुछ हो, तब तो! अतः वह अपने यहाँ कुछ पाने की आशा से आया है। मैंने देखा, घर में कुछ भी ऐसा नहीं है, जो उसे दिया जा सके। तब तुम्हारा कंगन नजर आया और यही खोलकर उसे दे देने का सोचा। मैंने तुम्हें जगाया नहीं, क्योंकि मुझे भय था कि कहीं तुम कंगन देने से इन्कार न कर दो।

पत्नी—तब तो आप चोरी कर रहे थे!

माघ—हाँ, बात तो सही ही है, पर और करता भी क्या? दूसरा कोई चारा भी तो नहीं था।

पत्नी—मुझे आपके साथ रहते इतने वर्ष हो गए, किन्तु देखती हूँ, आप आज तक मुझे नहीं पहचान सके! आप तो एक ही कंगन ले जाने की सोच रहे थे, कदाचित् मेरा सर्वस्व भी आप ले जाएँ, तो भी मैं प्रसन्न ही होऊँगी। पत्नी का इससे बड़ा सौभाग्य और क्या होगा कि वह पति के साथ मानव-कल्याण-कार्य में काम आती रहे। बुलाइए न, वह ब्राह्मण देवता कहाँ है? शुभ काम में देरी क्यों?

और, माघ ने झट से बाहर आकर उस ब्राह्मण को बुलाया तथा अन्दर ले जाकर कहा—देखो भाई, मुझे घर में कुछ नहीं मिल रहा है, जो तुम्हें दे सकूं। यह कंगन है, जो तुम्हारी इस पुत्री के पहनने के लिए है। उसी की ओर से तुम्हें यह भेंट किया जा रहा है। मेरे पास तो देने को कुछ भी नहीं है।

पत्नी ने दोनों कंगन उतार कर सहर्ष ब्राह्मण को दे दिए। ब्राह्मण गद्गद हो उठा। विस्मय और हर्ष के आवेग में उसकी आँखों से झर्-झर् आंसू की धाराएँ फूट चलीं। वह भगवान् को धन्यवाद देता हुआ तथा ऐसे महान् दम्पती का गौरवगान करता चला गया।

कहने का अभिप्राय यह है कि भारतवर्ष में ऐसी बहनें भी हुई हैं, जिन्होंने अपनी दारुण दारिद्रय एवं दुस्सह दीनता की हालत में भी आशा लेकर घर आए हुए अतिथि को खाली हाथ नहीं लौटाया। उन बहनों ने मानो यही सिद्धान्त बना लिया था—

'दानेन पाणिर्नतु कंकणेन'।

—हाथ दान देने से सुशोभित होता है, कंगन से नहीं।

गौरव की अधिकारिणी कौन?

ऐसी विराट् हृदय वाली बहनों ने ही महिला-समाज के गौरव को बढ़ाया है। ऐसी-ऐसी बहनें भी हो चुकी हैं, जिन्होंने अपरिचित भाइयों की भी उनकी गरीबी की हालत में सेवा की है और उन्हें अपने बराबर धनाढ्य भी बना दिया है। जैन इतिहास में उल्लेख आता है कि पाटन की रहने वाली एक बहन लच्छी (लक्ष्मी) ने एक अपरिचित जैन युवक को उदास देख कर ठीक समय उसकी सहायता की और उसे अपने बराबर धनाढ्य बना दिया। वही एक दिन का भूला-भटका हुआ, रोटी की तलाश में धक्के खाने वाला मरुधर देश का युवक ऊदा, एक दिन गुर्जर नरेश सिद्धराज जयसिंह का महामन्त्री उदयन बना और गुजरात के युगनिर्माता के रूप में जिसका नाम भारतीय इतिहास के स्वर्ण पृष्ठों पर आज भी चमक रहा है।

ऐसी बहनें ही जगत् में गौरव की अधिकारिणी हैं। वे महिला-जाति में मुकुटमणि हैं। उनके आदर्श देश-काल की सीमाओं से परे हैं।

परन्तु, कई बहिनें ऐसी भी हैं, जिनका घर भरा-पूरा है, जिन्हें किसी चीज की कमी नहीं है, फिर भी अपने हाथ से, किसी को एक रोटी का भी दान नहीं दे सकतीं! किन्तु याद रखो, गृहिणी की शोभा दान देने से ही है, उदारता से ही है। जो दानशीला और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदारमना हैं, वही लक्ष्मी की सच्ची मालकिन कही जा सकती हैं। जैन-साहित्य के महान् मनीषी ने कहा है—

"न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते।"

—ईटों और पत्थरों का बना हुआ घर, घर नहीं कहलाता, सद्-गृहिणी के होने पर ही, घर वस्तुतः घर कहलाता है।

खेद है कि आजकल ऐसी आदर्श गृहिणियों के बहुत कम दर्शन होते हैं। धनाढ्य लोगों के घरों में भी प्रायः ऐसी गृहणियाँ होती हैं, जो घर आए किसी गरीब-दुःखी को सान्त्वना देने के बदले गालियाँ देकर, धक्का दिलवाकर निकाल देती हैं। किन्तु जो सद्-गृहिणियाँ होती हैं, वे बड़ी संजीदगी से पेश आती हैं। वे कभी किसी के प्रति न तो कटु व्यवहार करती हैं और न कभी अपने चेहरे पर क्रोध की कोई एक रेखा ही आने देती हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org